International Journal of Advance and Applied Research
www.ijaar.co.in
ISSN – 2347-7075 Impact Factor – 8.141
Peer Reviewed Bi-Monthly
Vol. 12 No.4 Mar-Apr 2025

उत्तराखण्ड के जनपद चमोली में स्थित सिरोली शिलालेख का विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. शिवचन्द सिंह रावत
असिस्टेंट प्रोफेसर, इतिहास, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
गोपेश्वर, चमोली, उत्तराखण्ड
Corresponding Author: डॉ. शिवचन्द सिंह रावत
Email: - shivchandrawat@gmail.com
DOI- 10.5281/zenodo.15162358

सारांश:

अभिलेख इतिहास निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। अभिलेखों से प्राप्त तथ्यों को स्वाभाविक रूप से अधिक प्रामाणिक माना जाता है। यद्यपि उत्तराखण्ड में कई महत्त्वपूर्ण प्राचीन अभिलेख पाये गये हैं तथा इनका विस्तृत अध्ययन भी किया गया है, इनमें से अशोक का कालसी शिलालेख सर्वाधिक प्राचीन है, जिसका विस्तृत अध्ययन किया जा चुका है, किन्तु कालसी शिलालेख के पश्चात अन्य प्राचीन अभिलेखों में सिरोली शिलालेख सर्वाधिक महत्त्व का है, जिसका विस्तृत अध्ययन अभी तक नहीं किया गया है। यद्यपि इस अभिलेख का भाषायी अनुवाद हुआ है तथा इसका पाठ्य रूपान्तरण प्रकाशित किया गया है, किन्तु इस अभिलेख का विश्लेशणात्मक अध्ययन नहीं किया गया है, जैसे–मौखरी नरेश सर्ववर्मन का उत्तराखण्ड के इस सुदूरवर्ती क्षेत्र से क्या सम्बन्ध था? क्या उनका राज्य यहाँ तक विस्तृत था? उसके सामंत नरवर्मन ने क्यों इस वीरान स्थल पर यह जल प्रणाली का निर्माण किया? आदि। इस तरह इन प्रश्नों पर इस शोध पत्र में प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है। साथ ही अभिलेख के प्राप्ति स्थान, जल प्रणाली, वृद्धेश्वर अर्थात रूद्रनाथ, पर्यावरण आदि पर भी प्रकाश डाला गया है।

मुख्य बिन्दु: सिरोली, बबलेखा, जल–प्रणाली, वृद्धेश्वर, कारपक।

प्रस्थावना:

इतिहास के अध्ययन में अभिलेखों की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है, क्योंकि इनमें साहित्य की भाँति फेर–बदल करना संभव नहीं होता है। यह एक बिडम्बना ही रही है कि प्राचीन भारत का इतिहास जानने के लिए अन्य देशों की अपेक्षा भारत में साहित्यिक सामग्री की कमी रही है। इसीलिए कुछ पाश्चात्य विद्वानों की यह धारणा बन गई थी कि प्राचीन काल में भारतीयों को इतिहास की ठीक संकल्पना ही नहीं थी, जबकि ऐसा समझना भारी भूल है। वस्तुस्थिति यह है कि प्राचीन भारतीयों की इतिहास के प्रति संकल्पना आधुनिक इतिहासकारों से पूर्णतया भिन्न थी। आधुनिक इतिहासकार घटनाओं में कार्य–कारण सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास करता है, किन्तु प्राचीन भारतीय, इतिहास के अन्तर्गत केवल उन घटनाओं का वर्णन करते थे, जिनसे जनसाधारण को शिक्षा मिल सके। महाभारत में इतिहास की जो परिभाषा दी गई है उससे भारतीयों की इतिहास विषयक संकल्पना पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। इस ग्रन्थ के अनुसार– 'ऐसी प्राचीन रूचिकर कथा जिससे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की शिक्षा मिलती हो, इतिहास कहलाती है।'[1] प्राचीन काल में भारतवासी धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष को ही जीवन का लक्ष्य समझते थे। इन पुरूषार्थों को प्राप्त करने की प्रेरणा देने में इतिहास भी एक साधन था, इसलिए प्राचीन भारतीय इतिहासकार उन घटनाओं को कोई महत्त्व नहीं देते थे, जिनसे इन चारों पुरूषार्थों की शिक्षा न मिलती हो। इसीलिए प्राचीन भारत का इतिहास राजनीतिक कम और सांस्कृतिक अधिक है।

भारतीय समाज के निर्माण में धर्म का महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। इसीलिए प्राचीन भारत के अभिलेखों में राजनैतिक तथ्यों की अपेक्षा धार्मिक तथ्य अधिक उल्लिखित हैं। उदाहरणार्थ अशोक के अधिकांश अभिलेख धार्मिक उपदेशों से सम्बन्धित हैं। इसी प्रकार उत्तराखण्ड राज्य के चमोली जनपद के मुख्यालय गोपेश्वर से 13 किमी दूर मण्डल नामक कस्बे से लगभग 3.5 किमी की दूरी पर अत्रि अनुसूया आश्रम मार्ग पर उल्लिखित सिरोली शिलालेख की विषय वस्तु भी धर्मार्थ जल प्रणाली निर्माण से सम्बन्धित है। यद्यपि इस अभिलेख की विषय–वस्तु सामान्यतया धार्मिक प्रतीत होती है, किन्तु इसके अध्ययन से अन्य तथ्यों पर भी प्रकाश पड़ता है।

सिरोली शिलालेख का अध्ययन करने पर हमारे समक्ष अनेक संभावनाएँ उपस्थित होती हैं।

जैसे– अभिलेख वर्तमान उत्तराखण्ड राज्य के सुदूर सीमांत जनपद चमोली के मण्डल नामक कस्बे से लगभग 3.5 किमी की दूरी पर खुदा हुआ है, इससे प्रतीत होता है कि यह क्षेत्र मौखरी नरेश सर्ववर्मन के साम्राज्य के अन्तर्गत रहा होगा, क्योंकि सामान्यतया अभिलेख प्राप्ति के स्थान को उसी राज्य की सीमा के अन्तर्गत ही माना जाता है। यद्यपि यह तथ्य अपने आप में पूर्णतया प्रामाणिक नहीं है और न ही इस सम्बन्ध में अन्य साक्ष्य उपलब्ध हैं, किन्तु शिव प्रसाद, डबराल ने जी0एस0 गाई के पत्र के सन्दर्भ के आधार पर यही संभावना व्यक्त की है। वे उल्लेख करते हैं कि गोपेश्वर के पास सिरोली शिलालेख से विदित होता है कि ईशानवर्मन के पुत्र सर्ववर्मन ने कर्तृपुर पर अधिकार कर लिया था।[2] प्रस्तुत अभिलेख में सर्ववर्मन तथा उसके सामंत नरवर्मन का उल्लेख किया गया है, परन्तु अभिलेख से यह स्पष्ट नहीं होता है कि नरवर्मन स्थानीय सामंत था या यात्रा हेतु यहाँ आया था। इस सन्दर्भ में अन्य स्थानीय अभिलेखों का अध्ययन करने पर स्पष्ट होता है कि वर्मन जातिसूचक अनेक नाम अन्य अभिलेखों में प्राप्त होते हैं। तालेश्वर, ताम्रशासन में विष्णुवर्मन वृषवर्मन, अग्निवर्मन तथा द्विजवर्मन आदि का नाम आया है, जो कि ब्रहमपुर स्थित पौरव नरेश रहे हैं।[3] इस तथ्य से स्पष्ट होता है कि निश्चित ही इस हिमालयी क्षेत्र में वर्मन जातिसंज्ञा प्रचलित थी, जिससे यह संभावना व्यक्त की जाती है कि नरवर्मन भी स्थानीय सामंत रहा होगा। अतः उक्त तथ्यों के आधार पर कहा जा सकता है कि सिरोली शिलालेख में उल्लिखित नरेश सर्ववर्मन कन्नौज के मौखरी वंश से ही सम्बन्धित था। इसलिए प्रस्तुत लेख में सर्ववर्मन का मौखरी नरेश के रूप में ही उल्लेख किया गया है।

उद्देश्य

किसी भी अभिलेख के अध्ययन के सम्बन्ध में इतिहासकार की प्रमुख समस्या होती है, प्राप्त तथ्यों का विश्लेषण कर उनसे सटीक निष्कर्ष को स्थापित करना, क्योंकि उसका कार्य केवल प्राप्त तथ्यों का मात्र वर्णन करना ही नहीं है, बल्कि उन तथ्यों के आलोक में वर्तमान को समझने का प्रयास करना तथा अतीत और वर्तमान के अन्तः सम्बन्ध द्वारा अधिकाधिक जानकारी प्राप्त करना भी है। अतः इस दृष्टि से सिरोली शिलालेख का अध्ययन करना तथा उससे प्राप्त तथ्यों का विश्लेषण करना हमारा मुख्य उद्देश्य है। इस अभिलेख के अध्ययन का हमने जो प्रयास किया है, उस सन्दर्भ में हमने जनसाधारण से भी इस अभिलेख के बारे में जानने की कोशिश की। इससे हमें जो जानकारी मिली उससे स्पष्ट होता है कि सामान्य जन किस प्रकार किसी तथ्य को किवदन्ती या आख्यान का रूप देकर उसे पौराणिक स्वरूप दे देते हैं। यद्यपि यह भी सत्य है कि इस प्रकार की किसी भी सामग्री को पौराणिक स्वरूप देने का लाभ भी होता है। इससे उस सामग्री की रक्षा हो जाती है तथा उद्दण्ड व शरारती तत्व इस प्रकार की सामग्री से छेड़छाड़ नहीं करते हैं। संभवतः यही बात इस अभिलेख के सन्दर्भ में भी देखने को मिली है तथा इसीलिए यह अभिलेख दीर्घकाल से अब तक सुरक्षित रह सका है। इस अभिलेख के सन्दर्भ में हमने जब स्थानीय निवासियों से पूछा तो उन्होंने बताया कि यह अभिलेख पाण्डवों ने लिखा है, जब वे इस क्षेत्र में आये थे, उनमें से एक व्यक्ति ने यह भी बताया कि यह लेख बाबला (एक प्रकार की स्थानीय घास) नामक घास से लिखा गया है। इसलिए स्थानीय निवासी इसे 'बबलेखा' के नाम से भी जानते हैं। दूसरे व्यक्ति से पूछा तो उसने बताया कि यह अभिलेख आज तक पढ़ा नहीं जा सका है, जब हमने उसे बताया कि यह अभिलेख तो कब का पढ़ा जा चुका है तो उसे विश्वास ही नहीं हुआ। (यद्यपि विगत वर्ष सन् 2014 में पुरातत्व विभाग द्वारा इसे संरक्षित करने का प्रयास किया गया है तथा इस स्थान पर अभिलेख की विषय–वस्तु का भी उल्लेख किया गया है, जिससे अब आम व्यक्ति को भी इसकी जानकारी प्राप्त हो सकेगी।) इन बातों से स्पष्ट होता है कि किस तरह जनसामान्य में किवदन्तियाँ प्रचलित होती हैं तथा इतिहास के प्रति जनसामान्य का दृष्टिकोण कैसा है?

इस सिरोली शिलालेख को मौखरी नरेश सर्ववर्मन के विषयपति नरवर्मन द्वारा खुदवाया गया था। अभिलेख में उल्लिखित जल प्रणाली का निर्माण नरवर्मन द्वारा अपने माता–पिता तथा स्वयं के पुण्यार्थ करवाया गया।

यह अभिलेख उत्तराखण्ड में जनपद चमोली के मुख्यालय गोपेश्वर से 13 किमी0 दूर स्थित मण्डल कस्बे से 1.5 किमी की दूरी पर अत्रि–अनुसूया आश्रम मार्ग पर बसे ग्राम सिरोली से 2.0 किमी दूर तथा अनुसूया आश्रम से .5 किमी पहले सीधी खड़ी चट्टान पर खुदा हुआ है। अभिलेख सर्वप्रथम सन् 1966 ई0 में जी0एस0 गाई द्वारा प्रकाशित किया गया।[4] यह अभिलेख ब्राहमी लिपि व संस्कृत भाषा में लिखा गया है, इसमें सात पंक्तियाँ हैं, जिसका देवनागरी लिपि में रूपान्तरण इस प्रकार है–

1. महाराजाधिराज श्रीपर
2. मेश्वर सर्ववर्मन–पदानुध्यात
3. श्रीमहालय–वृद्धेश्वर–देव
4. कुल–कारापक–क्षतिय न
5. र वर्मन–माता–पितरात्मन
6. श्च पुण्याप्यानाय श्वितपथ

7. पानीय–संग्रह कृत कारित।

अभिलेख का हिन्दी अनुवाद इस प्रकार है–

महाराजाधिराज श्री परमेश्वर सर्ववर्मन के चरणों का ध्यान करने वाले श्रीवृद्धेश्वर देवकुल के निर्माता क्षत्रिय नरवर्मन ने अपने माता–पिता तथा स्वयं की पुण्य वृद्धि के लिए जल संग्रह प्रणाली का निर्माण किया। इस अभिलेख के बारे में यशवंत सिंह कठोच लिखते हैं कि अभिलेख की छठी पंक्ति के अंत में श्वित शब्द के उपरान्त पथ शब्द उत्कीर्ण है। 'थ' का वृत्त स्पष्ट दिखाई देता है।[5] वास्तव में अभिलेख को देखने तथा पढ़ने पर स्पष्ट पता चलता है कि इसमें पथ उत्कीर्ण है। श्वितपथ का तात्पर्य तीर्थभाग से है जो अनसूया मंदिर होकर रूद्रनाथ के प्रसिद्ध गुहा–मंदिर को जाता है। लेख की शीर्ष पंक्ति 14 इंच और आधार पंक्ति 21.5 इंच लम्बी है। लेख की सात पंक्तियाँ बाँये से 14 इंच तथा दाँये से 18.5 इंच की ऊँचाई में लिखित हैं। अक्षरों की ऊँचाई निम्नतम 1 इंच तथा अधिकतम 3 इंच की है।

अभिलेख की विषय–वस्तु के विश्लेशण से कई ऐतिहासिक तथ्यों को जानने तथा समझने में सहायता मिलती है। सर्वप्रथम इस अभिलेख से यह स्पष्ट होता है कि उत्तराखण्ड में यह प्रथम अभिलेख है जो कि किसी शासक का नामोल्लेख करता है। इस सन्दर्भ में यह भी उल्लेखनीय है कि अशोक के कालसी शिलालेख में उसके नाम का स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता है, जबकि सिरोली शिलालेख से स्पष्ट हो जाता है कि सर्ववर्मन नामक राजा का आधिपत्य उत्तराखण्ड तक था तथा यहाँ पर उसका अधीनस्थ सामंत नरवर्मन शासन करता था। सर्ववर्मन की पहचान इतिहासकारों द्वारा कन्नौज के मौखरी नरेश के रूप में की गई है जो कि हर्ष से पूर्व कन्नौज पर शासन कर रहा था। मौखरी नरेशों से पूर्व उत्तराखण्ड पर हूणों का शासन था। इस सम्बन्ध में बी0डी0 महाजन उल्लेख करते हैं कि तोरमाण के सिक्के उसके विदेशी उद्भव का प्रमाण देते हैं तथा यह सिद्ध करते हैं कि वह उत्तर प्रदेश, राजस्थान, पंजाब और कश्मीर के भागों में राज्य करता था। तोरमाण के पश्चात लगभग 515 ई0 में उसका पुत्र मिहिरकुल उसका उत्तराधिकारी बना।[6] (ज्ञातव्य है कि 2000 ई0 में अपनी स्थापना से पूर्व वर्तमान उत्तराखण्ड, उत्तर प्रदेश का ही एक भाग था।) मंदसौर अभिलेख के अनुसार यशोधर्मन ने 532 ई0 के आस–पास मिहिरकुल को पराजित किया। ह्वेनसांग के अनुसार मगध के शासक नरसिंह गुप्त बालादित्य ने भी मिहिरकुल को पराजित करने में सफलता प्राप्त की।[7] मिहिरकुल का शासन लगभग 540 ई0 तक माना जाता है। इस प्रकार संभवतः 467 ई0 से 540 ई0 तक इस क्षेत्र पर हूणों का प्रभुत्व रहा, क्योंकि यशोधर्मन द्वारा पराजित होने पर भी हूणों का अस्तित्व लगभग डेढ़ शती तक इस क्षेत्र पर बना रहा। अंततः मौखरी नरेश ईशानवर्मन तथा उसके पुत्र सर्ववर्मन ने हूणों का सामना किया तथा इस क्षेत्र को हूणों से खाली कर अपना अधिकार किया। अभिलेख से इस तथ्य की भी पुष्टि होती है कि मौखरी नरेशों मे सर्ववर्मन को ही इस क्षेत्र का अधिपति कहा गया है।

यद्यपि भारतीय इतिहास में मौखरी वंश का साम्राज्य विस्तार कन्नौज व उसके आस–पास के क्षेत्रों तक ही सीमित होने का उल्लेख मिलता है। जैसे–राधा कुमुद मुखर्जी मौखरी वंश के बारे में लिखते हैं कि इन्होंने सुंदरवर्मा के नेतृत्व में मगध में एक स्थानीय राज्य की स्थापना की थी[8], किन्तु सिरोली शिलालेख से यह स्पष्ट हो जाता है कि मौखरी साम्राज्य निश्चित ही उत्तराखण्ड के सुदूरवर्ती क्षेत्रों तक फैला हुआ था। सर्ववर्मन को महाराजाधिराज कहने से भी यह स्पष्ट होता है कि वह एक विस्तृत साम्राज्य का स्वामी था। उत्तराखण्ड पर मौखरी नरेशों का शासन तथा प्रभाव संभवतः लम्बे समय तक बना रहा तथा इनके द्वारा यहाँ देवकुलों की स्थापना भी की गई। अभिलेख में उल्लिखित महालय वृद्धेश्वर देवकुल कर्पक क्षत्रिय नरवर्मन से स्पष्ट होता है कि नरवर्मन वृद्धेश्वर देवकुल का निर्माता था। अभिलेख में श्रीमहालय वृद्धेश्वर देवकुल शिव के पंचकेदारों में से एक केदार रूद्रनाथ के मंदिर समूह को कहा गया है, क्योंकि जिस मार्ग पर यह अभिलेख खुदा हुआ है उसी मार्ग पर .5 किमी पर अत्रि–अनसूया आश्रम है तथा आगे चलकर यही मार्ग रूद्रनाथ को जाता है। अत्रि–अनसूया आश्रम में मंदिर समूह का निर्माण किया गया है, किन्तु अभिलेख में उल्लिखित वृद्धेश्वर संभवतः रूद्रनाथ को ही कहा गया है। रूद्रनाथ में स्थित चट्टान पर प्राचीन लघु मंदिरों का समूह स्थित है। वृद्धेश्वर देवकुल स्थापना के इस साक्ष्य से स्पष्ट होता है कि नरवर्मन ने रूद्रनाथ में स्थित पाषाण शिला पर छोटे–छोटे मंदिरों के समूह का निर्माण किया था। इस अभिलेख से यह भी स्पष्ट होता है कि हूणों के आक्रमण से संभवतः उत्तराखण्ड के मंदिरों को क्षति पहुँची थी। इस सम्बन्ध में बी0डी0 महाजन लिखते हैं कि सांस्कृतिक दृष्टि से हूण आक्रमण अभिशाप सिद्ध हुए। हूणों ने कला की उत्कृष्ट कृतियाँ नष्ट कर दी। उन्होंने विहारों तथा मंदिरों को गिरा दिया था।[9] अपने शासन काल में मौखरी नरेशों ने देवकुलों की स्थापना करके इसकी क्षतिपूर्ति करने का प्रयास किया था।

इस अभिलेख में पुण्यार्थ जल प्रणाली निर्माण का उल्लेख किया गया है जिससे स्पष्ट होता है कि

यह लोक कल्याण की भावना से किया गया पुण्य कार्य था, जिससे तत्कालीन मौखरी नरेशों के अच्छे शासन की जानकारी प्राप्त होती है, क्योंकि लोक कल्याणकारी कार्य तभी संभव हैं जब राजा व प्रजा दोनों सुखी हों, अन्यथा राजा राजपद बचाने तथा प्रजा दो वक्त के भोजन जुटाने में ही व्यस्त रहते हैं। विद्वानों के अनुसार सांस्कृतिक उन्नति तभी संभव है जब अतिरिक्त उत्पादन हो। इस सम्बन्ध में प्रसिद्ध विद्वान डी0डी0 कोसांबी स्पष्ट करते हैं कि मेसोपोटामिया के भव्य जिक्कुरात मंदिर, चीन की महान दीवार, मिस्र के पिरामिड या आधुनिक गगनचुम्बी इमारतें खड़ी करने के लिए उस काल में अतिरिक्त अनाज की उतनी ही अधिक सुलभता भी अवश्य रही होगी।[10] अर्थात जब कभी भी महान सांस्कृतिक विकास हुए हैं तो निश्चित ही उस समय राजा तथा प्रजा की आर्थिक दशा अच्छी रही होगी। इस तरह सुशासन से अतिरिक्त उत्पादन व अतिरिक्त उत्पादन से सांस्कृतिक उन्नति संभव है।

यह अभिलेख अत्रि–अनुसूया तथा रूद्रनाथ यात्रा मार्ग पर खुदा हुआ है तथा इसमें स्पष्ट उल्लेख है कि यहाँ पर नरवर्मन द्वारा पुण्यार्थ जल प्रणाली का निर्माण किया गया। इस तथ्य से विदित होता है कि इस यात्रा मार्ग पर निश्चित ही तब अनेक यात्रियों का आवागमन होता था। अतः यह भी स्पष्ट होता है कि इस यात्रा मार्ग का उपयोग तीर्थ यात्रियों के साथ–साथ अन्य प्रकार के यात्रियों यथा व्यापारियों आदि ने भी किया होगा, क्योंकि प्राचीन काल में हिमालयी क्षेत्र में इस प्रकार के दर्रे ही मार्ग के रूप में मिलते हैं।

एक महत्त्वपूर्ण तथ्य यह भी है कि जिस स्थान पर इस जल प्रणाली का निर्माण किया गया था, ऐसा प्रतीत होता है कि निश्चित ही उस स्थान पर उस समय वर्ष भर पानी उपलब्ध रहता होगा, किन्तु वर्तमान में उस स्थान पर वर्ष भर पानी उपलब्ध नहीं रहता है, जिससे यह स्पष्ट होता है कि इस क्षेत्र का पर्यावरण निरन्तर प्रभावित हो रहा है। पर्यावरण में बढ़ते ताप के कारण संभवतः इस जल स्रोत पर वर्ष भर पानी नहीं रहता है।

निष्कर्ष

इस प्रकार सिरोली शिलालेख से मौखरी नरेश सर्ववर्मन के बारे में यह महत्त्वपूर्ण जानकारी उपलब्ध होती है कि मौखरी नरेशों में से सर्ववर्मन को ही महाराजाधिराज कहा गया है। अभिलेखों की उपलब्धता इतिहास की विषय सामग्री तथा प्रामाणिक जानकारी प्रदान करती है। स्पष्ट है कि अभिलेखीय साक्ष्यों के आधार पर ही अशोक, खारवेल, रूद्रदामा जैसे अनेक शासकों का इतिहास आधारित है। अतः कहा जा सकता है कि सिरोली शिलालेख भी मौखरी नरेश सर्ववर्मन तथा उनके सामंत नरवर्मन की धार्मिक आस्था, जनकल्याणकारी कार्य आदि के बारे में जानने का एक प्रमुख स्रोत है। इस अभिलेख के प्राप्ति स्थल जल–प्रणाली का निर्माण होना तथा वर्तमान में उस स्थान पर जल प्राप्ति की समस्या होना इस स्थान के पर्यावरणीय असंतुलन को भी स्पष्ट करता है। यह अभिलेख मौखरी साम्राज्य की सीमा को भी अप्रत्यक्ष रूप से स्पष्ट करता है।

सुझाव

भारत के राष्ट्रीय इतिहास में सिरोली शिलालेख के अध्ययन को सम्मिलित किया जाना चाहिए, क्योंकि इससे मौखरी नरेश सर्ववर्मन तथा उसके राज्य के बारे में और प्रामाणिक जानकारी मिलती है।

सन्दर्भ–सूची

1. झा, द्विजेन्द्रनारायण एवं श्रीमाली कृष्णमोहन, (1984), प्राचीन भारत का इतिहास, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली, विश्वविद्यालय, दिल्ली, पुनर्मुद्रण 2009, पृ0–12
2. डबराल, शिव प्रसाद, (वि0 संवत् 2052) उत्तराँचल–हिमांचल का प्राचीन इतिहास, 3. चौथी शती से आठवीं शती तक, वीरगाथा प्रकाशन, दोगडा, गढ़वाल, पृ0–521
3. डबराल, शिव प्रसाद, (वि0 संवत् 2047) उत्तराखण्ड के अभिलेख एवं मुद्रा, वीरगाथा प्रकाशन, दोगडा, गढ़वाल, पृ0–48–51
4. एपि0 इण्डिया–वाल्यूम–38 भाग–2, अप्रैल, 1966, पृ0–57–58
5. कठोच, यशवंत सिंह, (1981), मध्य हिमालय का पुरातत्व, रोहिताश्व प्रिंटर्स, लखनऊ, पृ0–94
6. महाजन, बी0डी0, (2010), प्राचीन भारत का इतिहास, एस0 चन्द एण्ड कंपनी लि0, रामनगर, नई दिल्ली, पृ0–517
7. झा, द्विजेन्द्र नारायण एवं श्रीमाली, कृष्णमोहन, प्राचीन भारत का इतिहास, पूर्वोक्त, पृ0–287
8. मुखर्जी, राधाकुमुद, (1998), प्राचीन भारत, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पटना, पृ0–93
9. महाजन, बी0डी0, प्राचीन भारत का इतिहास, पूवोक्त, पृ0–519
10. कोसांबी, डी0डी0, प्राचीन भारत की संस्कृति और सभ्यता, पृ0–22